IJAER/January-February-2025/Volume-14/Issue-1 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research
(Peer-Reviewed, Open Access, Fully Refereed International Journal) Impact Factor:7.06

भारत निर्माण में संस्कृत साहित्य का योगदान

डॉ. ममता गुप्ता

सहायक आचार्य

टांटिया यूनिवर्सिटी (श्री गंगानगर)

शोध सार -

संस्कृत भारत की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत का आधार है। वेद, उपनिषद, महाकाव्य और पुराण जैसे ग्रंथों ने ज्ञान-विज्ञान, दर्शन, काव्य व संस्कृति को व्यापक आधार दिया। ऋग्वेद की ऋषिकाओं से लेकर मैत्रेयी-गार्गी जैसी विदुषियों का योगदान नारी-शक्ति को दर्शाता है। पर्यावरण एवं प्रकृति के प्रति सम्मान और संरक्षण की शिक्षा संस्कृत में विकसित हुई। महाभारत-रामायण ने नैतिकता, धर्म एवं समाज-व्यवस्था को दिशा प्रदान की । आधुनिक युग में योग, आयुर्वेद और कंप्यूटर-विज्ञान में संस्कृत की भूमिका महत्वपूर्ण है। यह भाषा हमें भविष्य में भी मार्गदर्शन व प्रेरणा देती रहेगी।

शब्द कुंजी: खगोलशास्त्र, कर्मकाण्ड, मौसमविज्ञान, मनोविज्ञान, भौतिकवाद, बीजगणित, लीलावती, आर्यभटीय, सूचना प्रौद्योगिकी, वैश्वीकरण, आयुर्वेद, वैज्ञानिकसूत्र

भारत की संस्कृति सदियों से अपनी विविधता, गहनता और ज्ञान-परंपरा के लिए जानी जाती रही है। इस संस्कृति के मूल में अनेक भाषाएँ, कला-शैलियाँ और दार्शनिक धाराएँ विद्यमान हैं, परंतु उन सभी के बीच संस्कृत भाषा का स्थान सर्वोच्च है। संस्कृत को भारत की सांस्कृतिक वाङ्मयी धरोहर का आधार माना जाता है, जिसके माध्यम से वेद, उपनिषद, महाकाव्य, पुराण, स्मृतियाँ, नाट्यशास्त्र, योगशास्त्र, आयुर्वेद, अर्थशास्त्र, और अनेकानेक विद्वत्-ग्रंथों का उद्भव हुआ। संस्कृत भाषा केवल एक प्राचीन विरासत नहीं, अपितु विकसित भारत के निर्माण में आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी प्राचीन काल में थी। संस्कृत का सौंदर्य, उसकी व्याकरणिक संरचना, छंद विधान, अलंकारिक समृद्धि, और दार्शनिक व्यापकता भारत के लोकजीवन को अनवरत आलोकित करती रही है। यह उस राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक है जो हमें अपने अतीत के साथ जोड़कर भविष्य के लिए एक सशक्त मार्ग प्रशस्त करती है।

संस्कृत साहित्य में निहित वेदों को भारतीय ज्ञान की आदि-मूलधारा माना जाता है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद जैसे चार प्रमुख वेदों में केवल ईश्वर-उपासना या आध्यात्मिक संदेश ही नहीं, अपितु प्रकृति विज्ञान, खगोलशास्त्र, संगीत, चिकित्सा एवं गणित आदि के भी प्राचीनतम सूत्र प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद में वर्णित सूर्य, चंद्रमा और ग्रहों की गतियों पर आधारित श्लोक प्रमाणित करते हैं कि हमारे पूर्वजों ने असीम जिज्ञासा से प्रकृति का निरीक्षण किया था। यही जिज्ञासा आगे चलकर भारतीय ज्योतिष, खगोलशास्त्र और मौसम-विज्ञान की आधारशिला बनी। यजुर्वेद और सामवेद में वैदिक कर्मकांड और संगीतात्मक आविष्कारों के सूत्र निहित हैं, जबकि अथर्ववेद चिकित्सा, जड़ी-बूटियों और तंत्र-मंत्र के आख्यानों से समृद्ध है। वेदों को अपौरुषेय कहा जाता है| वेदों की विद्या को समझने के लिए उपनिषदों का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्हें वेदांत भी कहते हैं, क्योंकि वे वेदों के अंतिम भाग या साररूप को प्रस्तुत करते हैं। उपनिषद् मुख्यतः मानव जीवन, ब्रह्म, आत्मा, प्रकृति तथा परम सत्य के अन्तर्संबंध पर विमर्श करते हैं। **"अहं ब्रह्मास्मि"**[1] **"तत्त्वमसि"**[2] जैसे महावाक्य मानवीय चेतना को अद्वैत दर्शन की ओर प्रेरित करते हैं, जो आत्मज्ञान और ब्रह्मज्ञान के प्रतीक हैं। इन विचारों ने भारत में दार्शनिक विमर्श की बहुलता को जन्म दिया—अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, द्वैत आदि दृष्टिकोण इसी परंपरा से पुष्पित-पल्लवित हुए, जिन्होंने आगे चलकर जीवन-दृष्टि, नैतिकता और समाज-निर्माण पर अतुलनीय प्रभाव डाला।

महिला-सशक्तिकरण के उदाहरण भी संस्कृत परंपरा में दृष्टिगत होते हैं। ऋग्वेद में घोषा, अपाला, लोपामुद्रा जैसी ऋषिकाओं का उल्लेख है, जिन्होंने ऋचाएँ रचीं। मैत्रेयी और गार्गी जैसी विदुषियाँ पुरुष ऋषियों के साथ शास्त्रार्थ करती थीं। यह प्राचीन परंपरा दर्शाती है कि ज्ञानार्जन का अधिकार महिलाओं को भी प्राप्त था| शौर्य और पांडित्य दोनों का ही प्रकर्ष महिलाओं में देखा जाता था | विश्पला जैसी विदुषी अपने पति के साथ सहभागी होकर उसने युद्ध में भाग लिया और विजय भी प्राप्त की | ऋग्वेद के मंत्रो में यथा –

याभिर्विश्पलां घनसां अथर्व्यं सहस्रमील्हे आजौ अजिन्वतम्|
याभिर्वशं अश्व्यं प्रेणिं आवतं ताभिः ऊषु ऊतिभिः अश्विना गतम्||[3]

चरित्रं हि वेर् इवाच्छेदि पर्णं आजा खेलस्य परितक्म्यायाम् |
सद्यो जन्घां आयसीं विश्पलायै घने हिते सर्तवे प्रति अधत्तम् ||[4]

भले ही बाद के कालखंडों में कई सामाजिक रूढ़ियों ने उन्हें सीमित करने का प्रयत्न किया हो। शक्ति पूजा की अवधारणा भी संस्कृत साहित्य से ही पुष्पित हुई, जहाँ दुर्गा, काली, सरस्वती जैसी देवियों को ऊँचा स्थान देकर उन्हें सृजन, संहार और विवेक के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। अतः यदि हम ऐतिहासिक प्रमाणों को देखें, तो संस्कृत साहित्य में नारी की भूमिका केवल एक दर्शक या अनुयायी तक ही सीमित नहीं थी अपितु स्वतंत्र रूप से वे ज्ञान, वैचारिक विमर्श एवं युद्ध में भी भाग लेती थी। उनके जीवन से आज के भारतीय स्त्री – जीवन के आदर्श विनिर्मित हुए है |

संस्कृत साहित्य में पर्यावरण और प्रकृति के प्रति सम्मान तथा संवेदनशीलता का संदेश भी प्राप्त होता है। वैदिक काल से ही सूर्य, पृथ्वी, जल, वायु को देवताओं के रूप में सम्मान दिया जाता रहा है। **"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः"**[5] जैसी ऋचाएँ धरती के प्रति कृतज्ञता और संरक्षण

के भाव को अभिव्यक्त करती हैं। वर्तमान में जहाँ जलवायु परिवर्तन और पर्यावरण संकट गंभीर समस्या के रूप में उभर रहे हैं, वहाँ प्राचीन संस्कृत ग्रंथों से हमें प्रकृति-संरक्षण की प्रेरणा प्राप्त होती है | ऋग्वेद के महान् ऋषि दीर्घत्या औचरय एवं यजुर्वेद के ईशावास्योपनिषद् के अध्याय में अथर्वा ऋषि पर्यावरण के संसाधनो के सदुपयोग की श्रेष्ठतम शिक्षा क उदाहरण प्रस्तुत करते है –

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत् |
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ||"[6]

इस संसार में जो कुछ भी है वह सब ईश्वर का निवास है , ईश्वर के द्वारा बनाया गया है | इसलिए उसका उपयोग त्याग की भावना से करें तथा किसी के भी धन को न लेवें |

शांति-मंत्र, जिसमें द्यौ (आकाश), अंतरिक्ष, पृथ्वी, वनस्पतियों और सभी जीवों में शांति की प्रार्थना की गई है, जो आज भी आधुनिक पर्यावरणीय चिंतन के साथ गहनता से जुड़ा है, जो स्पष्ट करता है कि संस्कृत साहित्य मानवता को अध्यात्मिक और नैतिक मूल्य ही नहीं प्रदान करता, अपितु प्रकृति के साथ भी जोड़ता है, यथा – **ॐ द्यौ शांतिरन्तरिक्षः शांतिः पृथ्वी शांतिरापः शान्तिः रोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॐ।।**[7] मधुमय पर्यावरण ऋग्वैदिक ऋषियों की सहज प्यास है। प्रकृति में रूप है, रस है, गन्ध है, ध्वनियां हैं। वे दिग्दिगन्त "मधु" कामना करते हैं, यथा-

"मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः।।
मधु नक्तमुतोष सो मधुमत्पार्थिवं रजः।
मधु द्यौरस्तु नः पिता ||
मधुमान्नो वस्पतिर्म धुमां अस्तु सूर्यः।
माध्यवीर्गावो भवन्तु नः।।[8]

भारतीय संस्कृत साहित्य का एक विलक्षण पक्ष महाकाव्य और पुराणों की परंपरा में भी प्रकट होता है। महाभारत और रामायण को भारत की सांस्कृतिक नींव माना जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। महाभारत में वर्णित पांडवों और कौरवों की गाथा, विषम परिस्थितियों में धर्म और न्याय की कसौटी पर खरे उतरने के प्रयासो के रूप में देश-विदेश में विख्यात है। इसी महाकाव्य का एक अनुपम खंड भगवद्गीता है, जहाँ अर्जुन और श्रीकृष्ण के संवाद के माध्यम से समस्त मानवता को कर्म, आत्मबोध, संयम, और लौकिक-दर्शन का संदेश प्राप्त होता है। **"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"**[9] जैसे उपदेश आज के प्रतिस्पर्धी युग में भी अत्यन्त प्रेरणादायक हैं। रामायण में मर्यादा पुरुषोत्तम राम की कथा है, जिनका जीवन त्याग, दया, समर्पण, आदर्श शासन तथा बुराई पर विजय के रूप में देखा जाता है। **"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"**[10] जैसे श्लोक भावनात्मक रूप से प्रत्येक भारतीय हृदय में राष्ट्रप्रेम की भावना जागृत करते हैं। अतएव ये महाकाव्य धार्मिक आस्था से भी ऊपर उठकर नैतिक मूल्यों और समाज के आदर्शों को स्थापित करते हैं। भगवद्गीता में कर्मयोग, ज्ञानयोग, और भक्तियोग के विविध मार्ग व्यक्ति के आत्मविकास के मार्ग दिखलाने में समर्थ हैं। शांति-पाठ और ध्यान की पद्धतियाँ मानसिक स्वास्थ्य, तनाव-नियंत्रण, और सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक हैं।

संस्कृत साहित्य में शिक्षा और दर्शन की परंपरा भी अत्यंत समृद्ध रही है। प्राचीन काल में गुरुकुलों की व्यवस्था शिक्षा का प्रमुख आधार थी, जहाँ विद्यार्थी शास्त्रार्थ करते हुए वेद, वेदांग, व्याकरण, दर्शन, साहित्य, गणित आदि का अध्ययन करते थे। इन गुरुकुलो में मात्र पुस्तकीय ज्ञान न देकर चरित्र निर्माण, आत्मानुशासन, नैतिकता और सेवा-भावना पर भी समान रूप से बल दिया जाता था। ब्रह्मचर्य का पालन, गुरु-शिष्य परंपरा, और व्यावहारिक प्रशिक्षण यह सुनिश्चित करता था कि विद्यार्थी अपने भीतर ज्ञान को आत्मसात कर सके। गुरुकुल से निकले विद्वान केवल विद्वान ही नहीं, बल्कि आदर्श आचरण वाले समाज सुधारक और कुशल प्रशासक भी बनते थे। आधुनिक शिक्षा प्रणाली यदि समग्र शैक्षिक-पद्धति के कुछ ही तत्वों को आत्मसात कर ले तो हम एक संतुलित मानव संसाधन तैयार कर सकते हैं जो न केवल तकनीकी रूप से समर्थ हो, अपितु मूल्यों में भी समृद्ध हो।

संस्कृत की दार्शनिक धाराओं में सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, और वेदांत को प्रमुखता दी जाती है, जिन्हें सामूहिक रूप से षड्दर्शन कहा जाता है। सांख्य दर्शन प्रकृति और पुरुष के द्वैत पर आधारित है, जबकि योग दर्शन पतंजलि के योगसूत्रों में मनोविज्ञान, चित्तवृत्ति और समाधि के मार्ग को स्पष्ट करता है। न्याय दर्शन प्रमाण, तर्क और विवेचना पर बल देता है तो वैशेषिक दर्शन पदार्थ (द्रव्य), गुण, कर्म, और श्रेणीबद्ध यथार्थ को विश्लेषित करता है। मीमांसा दर्शन वेदों के कर्मकांड और उपासना संबंधी पक्षो पर गहनता से विचार करता है। वहीं वेदांत दर्शन, जो उपनिषदों के साररूप में उभरा, ब्रह्म और आत्मा की एकात्मकता को विभिन्न दृष्टिकोणों से व्याख्यायित करता है। इन सभी दर्शनों ने भारत में वैचारिक विविधता, परस्पर सम्मान, और संवाद की परंपरा को पुष्ट किया है। शास्त्रार्थ प्रणाली इसी वैचारिक स्वतंत्रता का परिणाम थी, जिसमें विद्वान तर्क और प्रमाण के आधार पर विभिन्न मतों प्रकट करते थे, और किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की अपेक्षा एक-दूसरे के मतों को सम्मानपूर्वक समझने का प्रयास करते थे।

आध्यात्मिक जागरूकता की दृष्टि से भी संस्कृत साहित्य आज के मानसिक तनाव से ग्रस्त समाज को राहत प्रदान कर सकता है। योगसूत्र में बताए गए अष्टांग योग—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि[11] — व्यक्ति की आंतरिक शांति और चित्त की एकाग्रता को प्रोत्साहित करते हैं |

समाज में वैचारिक खुलेपन को संस्कृत साहित्य ने सदैव प्रोत्साहित किया। चार्वाक जैसे भौतिकवादी दर्शन को भी स्थान मिला, जिसने ईश्वर, परलोक, और कर्मफल जैसी अवधारणाओं को चुनौती दी। बौद्ध और जैन परंपराएँ भी संस्कृत से प्रभावित हुईं| उन्होंने भी अहिंसा, करुणा, और समानता के आदर्शों को आगे बढ़ाया। इस तरह संस्कृत ने धार्मिक और दार्शनिक विविधता को पुष्ट किया, जो आज के बहुलतावादी समाज के लिए एक प्रेरणा है कि सह-अस्तित्व और संवाद से ही सभ्यता आगे बढ़ती है, न कि परस्पर विरोध से।

संस्कृत साहित्य ने कला और सौंदर्यबोध के क्षेत्र में भी अद्वितीय योगदान दिया है। कालिदास को संस्कृत का महानतम कवि और नाटककार माना जाता है, जिनकी रचनाएँ—'अभिज्ञानशाकुंतलम्', 'मेघदूतम्', 'कुमारसंभवम्', और 'रघुवंशम्'—शैली, छंद, अलंकार, और

प्राकृतिक चित्रण की दृष्टि से अप्रतिम हैं। 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' में प्रेम और विरह के साथ मानवीय संबंधों की सुकुमार भावनाएँ, प्रकृति के साथ सामंजस्य और राजधर्म का आदर्श दृष्टिगत होता है। वहीं 'मेघदूतम्' विरहिणी यक्ष की कथा कहता है, जहाँ मेघ को संदेशवाहक बनाकर कवि ने प्रकृति का मानवीकरण और भावनाओं का उदात्तीकरण किया है। संस्कृत नाट्यशास्त्र का मूल स्रोत भरतमुनि का 'नाट्यशास्त्र', जिसमें रस-सिद्धांत को प्रतिपादित किया गया है। रस अर्थात् भावों के आस्वादन की वह पराकाष्ठा जो दर्शक या पाठक के हृदय को आनन्दित करती है। आठ रसों—श्रृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्‌भुत[12] — के माध्यम से कला के आनंद को परिभाषित किया गया है। यह सिद्धांत आज भी रंगमंच, सिनेमा, नृत्य, और साहित्य के सौंदर्य-विवेचन में मार्गदर्शक बना हुआ है।

पंचतंत्र और हितोपदेश जैसे नीति-ग्रंथों ने सरल कथाओं के माध्यम से नैतिक मूल्यों और व्यवहारिक बुद्धि का शिक्षाप्रद प्रसार किया। पशु-पक्षियों को पात्र बनाकर मित्रता, विवेक, सहयोग, परोपकार जैसे पाठ अत्यंत रोचक शैली में प्रस्तुत किए गए, जिनका अनुवाद विश्व की विविध भाषाओं में हुआ। इस प्रकार संस्कृत साहित्य ने भारतीय ज्ञान को केवल विद्वानों तक सीमित नहीं रखा, अपितु जनसामान्य को नैतिकता और व्यवहार-कुशलता का पाठ भी सिखाया। इसी क्रम में भर्तृहरि की 'नीतिशतक', 'श्रृंगारशतक', और 'वैराग्यशतक' जैसी रचनाएँ शब्दों की सारगर्भित अभिव्यक्ति के माध्यम से लोकहितकारी संदेश प्रदान करती हैं। **"विद्या ददाति विनयं, विनयाद् याति पात्रताम्**..."[13] जैसे श्लोक आज भी विद्यार्थियों और उद्यमियों के लिये प्रेरणास्रोत हैं।

संस्कृत में रचित विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित ग्रंथ भी विश्व विरासत में अप्रतिम योगदान रखते हैं। आर्यभट का 'आर्यभटीय' गणित और खगोलशास्त्र का ऐसा ग्रंथ है, जिसमें शून्य की अवधारणा, दशमलव प्रणाली, ग्रहण, पृथ्वी के घूमने के सिद्धांत, और ग्रहों की सटीक गति का विवेचन प्राप्त होता है। भास्कराचार्य ने 'लीलावती' और 'बीजगणित' में गणित को प्रश्नोत्तर शैली में सहज, रुचिकर और व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत किया है। आयुर्वेद के क्षेत्र में चरक संहिता और सुश्रुत संहिता महत्त्वपूर्ण स्तंभ हैं, जिनमें औषधीय पादपो, आहार-विहार, शल्यचिकित्सा और रोगों के उपचार की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। सुश्रुत ने शल्यचिकित्सा में प्लास्टिक सर्जरी और अंगों के प्रत्यारोपण तक का कथन किया है, जो आधुनिक जगत के लिए प्रेरणास्रोत रही है। "कौटिल्य का अर्थशास्त्र" शासन, नीतिशास्त्र, राजस्व, रक्षा और गुप्तचर प्रणाली के विषय में गूढ विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जिससे आधुनिक प्रशासनिक ढाँचों को भी दिशा प्राप्त होती है।

पाणिनि का व्याकरणशास्त्रीय ग्रन्थ 'अष्टाध्यायी' विश्व का सर्वाधिक परिष्कृत और तार्किक व्याकरण ग्रंथ माना जाता है। इसकी सूत्र-शैली में भाषा के नियमों को इस प्रकार सुव्यवस्थित रूप में वर्णित किया गया है कि आधुनिक कंप्यूटर विज्ञान और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में भी यह एक आदर्श प्रतिमान के रूप में उभरा है, जो स्पष्ट करता है कि संस्कृत भाषा मात्र ऐतिहासिक जिज्ञासा नहीं, अपितु भविष्य के तकनीकी विकास में भी उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

समाज और नैतिकता में संस्कृत साहित्य का प्रभाव व्यापक है। "सर्वे भवन्तु सुखिनः" जैसे विचार वैश्विक शान्ति, उदारता एवं एकता को प्रेरित करते है। इसी प्रकार **"अहिंसा परमो धर्मः"**[14] मन, वचन, और कर्म से किसी भी प्रकार की हिंसा से बचने की प्रेरणा देता है। महाभारत का **"धर्मो रक्षति रक्षितः"**[15] न्याय और सत्य के मार्ग पर चलने की ओर प्रवृत्त करता है। राजनीतिक नेतृत्व और प्रशासन के आदर्श के रूप में युधिष्ठिर की सत्यप्रियता और राम के प्रजावत्सल गुण हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था को सुदृढ़ करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। पंचतंत्र, हितोपदेश, और नीतिशतक की कथाये लोक-व्यवहार में विवेक, संयम, और सहयोग की भावना विकसित करती हैं, जो सामाजिक सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक हैं।

संस्कृत की इसी बहुमुखी उपयोगिता ने विभिन्न भारतीय भाषाओं के विकास में भी अहम भूमिका निभाई है। हिंदी, मराठी, बंगाली, गुजराती, पंजाबी, असमिया, ओड़िया, और अन्य भाषाओं में संस्कृत-जन्य तत्सम शब्दों का भण्डार है। कई व्याकरणिक नियम और शब्दावली संस्कृत से ही उद्‌भूत हैं, जिसने भारतीय भाषाओं को समृद्ध किया है। अतएव संस्कृत ने केवल अपने साहित्य को ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण भारतीय भाषाई परिदृश्य को भी प्रभावित किया है। प्राचीन काल में शिलालेखों, ताम्रपत्रों, और प्रशस्तियों में भी संस्कृत का व्यापक उपयोग हुआ, जिस कारण भारतीय इतिहास का एक बड़ा अंश इसी भाषा में दर्ज है।

योग और आयुर्वेद की लोकप्रियता ने भी संस्कृत को वैश्विक मंच पर प्रतिष्ठित करने में अहम भूमिका का निर्वाह किया है। आयुर्वेद की मूल संहिताएँ संस्कृत में ही लिखी गईं, और योगसूत्र संस्कृत भाषा में ही संकलित है। जब अंतरराष्ट्रीय स्तर पर योग को स्वीकार्यता प्राप्त हुई और संयुक्त राष्ट्र ने *21* जून को अंतरराष्ट्रीय योग दिवस घोषित किया, तब संस्कृत के श्लोक और मंत्रोच्चार भी चर्चित हुए। इसने विश्व को यह समझने में सहायता प्रदान की कि संस्कृत के माध्यम से ही योग की विधियों और आयुर्वेदिक ज्ञान को मूलरूप में समझा जा सकता है। यही कारण है कि अब विदेशों के कई विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों में संस्कृत-अध्ययन केंद्र खोले जा रहे हैं, जिससे भारत के पारंपरिक ज्ञान तक पहुँचा जा सके।

आधुनिक भारत में संस्कृत की पुनर्प्रासंगिकता को समझा जाने लगा है। नई शिक्षा नीति के अंतर्गत संस्कृत को महत्त्वपूर्ण भाषा के रूप में पुनर्जीवित करने के प्रयास हो रहे हैं। विश्वविद्यालयों में संस्कृत विभागों की स्थापना, शोध परियोजनाएँ, अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में संस्कृत-पत्र प्रस्तुतिकरण, तथा ऑनलाइन मंचों पर संस्कृत शिक्षण के प्रयास हो रहे हैं। संस्कृत भारती जैसी संस्थाएँ संस्कृत संभाषण को बढ़ावा देने हेतु शिविर और पाठ्यक्रम आयोजित कर रही हैं, जहाँ भाषा को जीवंत रूप से बोला और सीखा जाता है। यह सुदृढ़ संकेत है कि संस्कृत को केवल पौराणिक औपचारिकता समझने की अपेक्षा आधुनिक संदर्भों में उपयोगी और प्रभावी भाषा के रूप में देखा जा रहा है। कंप्यूटर विज्ञान, सूचना प्रौद्योगिकी, और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के क्षेत्रों में संस्कृत की संरचनागत वैज्ञानिकता शोध का विषय बनती जा रही है। यह भाषा अपनी स्पष्ट व्याकरणिक नियमावली के कारण मशीन लर्निंग के एल्गोरिद्म और अनुवाद तंत्रों के विकास में सहायता कर सकती है।

संस्कृत साहित्य कालातीत मान्यताओं, मूल्यों, और अंतर्दृष्टियों का भंडार है। उदाहरणार्थ, भर्तृहरि के नीतिशतक का प्रसिद्ध श्लोक – विद्याधनं सर्वधनेषु प्रधानम्" बताता है कि शिक्षा का धन समस्त धनों में सर्वोच्च है, क्योंकि भौतिक वस्तुएँ छिन सकती हैं, परन्तु विद्या निरंतर फल देती है। **"अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्, उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुंबकम्**"[16] इस बात का परिचायक है कि केवल संकुचित दृष्टिकोण वाले लोग ही 'अपना' और 'पराया' देखते हैं; उदार हृदय के लिए संपूर्ण विश्व ही परिवार है। आज के वैश्वीकृत युग में जब अनेक राष्ट्र सहयोग और विरोध के दो छोर पर खड़े होते हैं, यह संदेश विशेष रूप से सार्थक हो जाता है। ऐसे श्लोक हमारी नैतिक और भावनात्मक चेतना को परिष्कृत करने का सामर्थ्य रखते हैं, जिससे एक न्यायपूर्ण और समावेशी समाज का निर्माण किया जा सकता है।

संस्कृत साहित्य की समृद्धि इतनी है कि वह जीवन के प्रत्येक आयाम को स्पर्श करता है—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की चार पुरुषार्थ प्रणालियों से लेकर कला, विज्ञान, और सामाजिक न्याय तक। "कृण्वन्तो विश्वमार्यं" वैदिक उद्घोष बताता है कि भारतीय परंपरा उदारता और सार्वभौमिक कल्याण की भावना से ओत-प्रोत रही है। इसी भावना को केंद्र में रखकर आज जब हम विकसित भारत और समावेशी विकास की बात करते हैं, तो हमें संस्कृत साहित्य से निरंतर प्रेरणा मिल सकती है। यह प्रेरणा हमें अपनी नीतियों में, अपनी संस्थाओं में, और व्यक्तिगत जीवन में सुकर्म, सत्य, और सौंदर्य की स्थापना के लिए प्रवृत्त कर सकती है।

संस्कृत सदैव भविष्य को आलोकित करती आई है। उसके प्राचीन श्लोक वर्तमान संकटों का समाधान सुझाते हैं, उसके नीतिगत सिद्धांतों में लोकतंत्र की जड़ें मजबूत करने की शक्ति है, उसके वैज्ञानिक सूत्र आज के शोधकर्ताओं के लिए अप्रतिम खजाना सिद्ध हो सकते हैं। पर्यावरण-संकट, सामाजिक विषमता, नैतिक पतन — इन तमाम चुनौतियों के बीच संस्कृत साहित्य का आलोक अंतःकरण को दिशा देता है, उसे गहराई से सोचने के लिए प्रेरित करता है, और रचनात्मक समाधान खोजने में सहयोगी बनता है। यह भाषा हमारे मन और बुद्धि को विस्तृत फलक पर ले जाकर मानवमात्र के हित की कामना करती है।

सभी पक्षों पर विचार करने के पश्चात् निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि संस्कृत साहित्य एक ऐसा विस्तृत समुद्र है, जहाँ धार्मिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक, साहित्यिक, कलात्मक, नैतिक, और आध्यात्मिक सभी प्रकार के मोती विद्यमान हैं। ये मोती हमें आंतरिक रूप से भी समृद्ध करते हैं और बाहरी रूप से भी उन्नति का मार्ग दिखलाते हैं। वह मात्र एक भाषा नहीं, बल्कि भारतीय सभ्यता की आत्मा है। विकसित भारत को इस आत्मा का सम्मान करते हुए आगे बढ़ना होगा। संस्कृत साहित्य केवल भारत की महान सांस्कृतिक विरासत ही नहीं, बल्कि एक ऐसा शाश्वत प्रकाश-स्तंभ है, जो भविष्य की राह को भी रोशन कर सकता है। यह वह अमृत-स्रोत है, जिससे हम अंतहीन प्रेरणा और दिशा प्राप्त कर सकते हैं। इसमें निहित वेद, उपनिषद, महाभारत, रामायण, पुराण, नाटक, काव्य, अलंकार, छंद, आयुर्वेद, गणित, खगोलशास्त्र, अर्थशास्त्र, योग, दर्शन, और समाजशास्त्रीय तत्व सब मिलकर विकास का एक मानव-केन्द्रित मॉडल प्रस्तुत करते हैं। यही वह मौलिक आधार है, जिसके द्वारा भारत अपनी आत्मा को सुदृढ़ रखकर विश्वगुरु की भूमिका पुनः निभा सकता है। और यही वह ऊर्जा है, जो हमें अनंत संभावनाओं के साथ विकसित भारत के स्वप्न को साकार करने की ओर प्रेरित करती है।

सन्दर्भ :-

1. वृहदारण्यकोपनिषद् *1.4*
2. छान्दोग्योपनिषद्, अध्याय *6*
3. ऋग्वेद *1.112.10*
4. ऋग्वेद *1.116.15*
5. अथर्ववेद, पृथ्वीसूक्त *12.1.12*
6. ईशावास्योपनिषद्, मन्त्र-*1*
7. यजुर्वेद *36.17*
8. ऋग्वेद *1.90/6,7,8*
9. श्रीमद्भगवद्गीता *2.47*
10. वाल्मीकि रामायण (पाण्डुलिपि)
11. पातंजलयोगसूत्र *2.29*
12. नाट्यशास्त्र *6.15*
13. हितोपदेश, श्लोक *-6*
14. महाभारत, अनुशासनपर्व, अध्याय *117*
15. महाभारत, वनपर्व *3.312.128*
16. महोपनिषद्, अध्याय *4*, श्लोक *71*

डॉ ममता गुप्ता
सहायक आचार्य
टांटिया यूनिवर्सिटी (श्रीगंगानगर)
Email ID: gmamta86@gmail.com
Mob: 9829421331